झारखण्ड उच्च न्यायालय, राँची
आपराधिक विविध याचिका सं0 1616 वर्ष 2022

प्रवीण जायसवाल उर्फ प्रवीण कुमार जायसवाल, उम्र लगभग 53 वर्ष, पुत्र श्री ब्रज किशोर प्रसाद जायसवाल निवासी ''सुन्दरालय'' मधुकम लेन, रातू रोड डाकखाना, हेहल थाना-सुखदेव नगर, जिला-राँची, राज्य-झारखण्ड।

..... याचिकाकर्ता

बनाम

1. झारखण्ड राज्य
2. गुनजेश कुमार उम्र लगभग 40 वर्ष, पुत्र स्व0 दिनेश्वर प्रसाद (वर्तमान मामले का मूल परिवादी, अब मृतक, अब, अपने पुत्र गुनजेश कुमार द्वारा प्रतिस्थापित) निवासी ''मनेर भवन'' मनेर गली, पिस्का मोरे, रातू रोड, डाकखाना-हेहल, थाना-पांड्रा ओ0पी0 जिला-राँची राज्य झारखण्ड।

..... उत्तरदातागण

याचिकाकर्ता के लिए : श्री एस0पी0 राय, अधिवक्ता
राज्य के लिए : श्री विनीत कुमार वशिष्ठ, विशेष लोक अभियोजक
उत्तरदाता सं0 2 के लिए : श्री अरूण कुमार, अधिवक्ता

<u>निर्णय</u>

मा0 श्री न्यायमूर्ति अनिल कुमार चौधरी

न्यायालय द्वारा:- दोनों पक्षकारों को सुना

2. इस आपराधिक विविध याचिका को सम्पूर्ण आपराधिक कार्यवाही तथा विद्वान जेएमएफसी, राँची द्वारा पारित संज्ञान लेने वाले आदेश दिनांक 04.03.2020 का अभिखण्डन करने के अनुरोध के साथ धारा 482 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अन्तर्गत इस न्यायालय के अधिकारिता का अवलंब लेते हुए दाखिल किया गया है। जिसके द्वारा तथा जिसके अन्तर्गत परिवाद मामला सं0 1331 वर्ष 2017 के संबंध में भा0द0सं0 की धारा 406/420 के अधीन दण्डनीय अपराधों के लिए संज्ञान लिया गया है।

3. मामले का संक्षिप्त तथ्य यह है कि याचिकाकर्ता एक अधिवक्ता है तथा छल द्वारा, इसने कपटपूर्वक विक्रय विलेख परिवादी द्वारा अपने पक्ष में परिवादी को विश्वास दिलाते हुए निष्पादित करवाया था कि परिवादी फ्लैट के एक युनिट के सम्बन्ध में विक्रय विलेख निष्पादित कर रहा है लेकिन वास्तव में, छल साधन एवं तथ्य के छिपाने तथा छल द्वारा सुनिश्चित किया था कि विक्रय विलेख में परिवादी द्वारा याचिकाकर्ता को विक्रय विलेख द्वारा अन्तरित दो फ्लैटों का विवरण अन्तर्विष्ट है। विद्वान मजिस्टे्रट ने परिवाद, सत्यनिष्ठा प्रतिज्ञान पर कथन एवं जांच साक्षीगण के कथन के आधार पर भारतीय दण्ड संहिता की धारा 406 तथा 420 के अन्तर्गत दण्डनीय अपराधों को करने के

लिए याचिकाकर्ता के विरूद्ध अग्रसर होने के लिए प्रथम दृष्टया मामला पाया है तथा एकमात्र याचिकाकर्ता के विरूद्ध उक्त अपराधों के बारे मे संज्ञान लिया था।

4. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन किया गया है कि याचिकाकर्ता के विरूद्ध अभिकथन किया है। तत्पश्चात यह निवेदन किया गया है कि वास्तव में याचिकाकर्ता ने 31,00,000/- के कुल प्रतिफल में दो फ्लैट क्रय किया है तथा परिवादी के पिता ने विक्रेता तथा क्रेता याचिकाकर्ता द्वारा द्विपक्षीय समझौता सहित कुछ प्रतिभूतियो पर हस्ताक्षर भी किया था जैसा बैंक द्वारा अपेक्षित है एवं विक्रय विलेख में कोई असंदिग्धता नही है एवं इससे निश्चित तौर पर प्रकट होता है कि दोनो फ्लैटों को परिवादी के पिता द्वारा याचिकाकर्ता को बेचा गया था जो मूल परिवादी था तथा वर्तमान परिवादी ने इनके मृत्यु के बाद अपने पिता का स्थान लिया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि परिवाद दाखिल करने के पहले परिवादी ने विक्रय विलेख दिनांक 26-02-2014 को अकृत व शुन्य घोषित कराने हेतु 19-12-2016 को हक वाद सं0 705 वर्ष 2016 संस्थित किया था तथा तत्पश्चात मात्र याचिकाकर्ता को तंग करने के अंतरस्थ हेतु से यह आपराधिक मामला दाखिल किया है एवं याचिकाकर्ता का नाम राँची नगर निगम कर्यालय के अभिलेखो मे सम्यक नामांतरित किया गया है तथा वह इसे जान रहा है। यह मामला राँची नगर निगम तथा पुलिस के विरूद्ध याचिकाकर्ता द्वारा दिये गये परिवाद के घोर निन्दा के रूप में दाखिल किया गया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि याचिकाकर्ता के विरूद्ध किये गये अभिकथन में असंगति है। 2006(6) एससीसी 736 में संप्रकाशित इण्डियन आयल कार्पोरेशन बनाम एनईपीसी इण्डिया तथा अन्य के मामले में भारत के मा0 उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर भरोसा करते हुए याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन किया गया है कि उक्त मामले में भारत के मा0 उच्चतम न्यायालय ने 2000(2) एससीसी 636 में संप्रकाशित जी0 सागर सूरी तथा एक अन्य बनाम उ0प्र0 राज्य तथा अन्य के मामले में भरोसा किया है जिसमें भारत के मा0 उच्चतम न्यायालय ने संप्रेक्षित किया है कि मामला जो तत्वतः सिविल प्रकृति का है को दाण्डिक अपराध का लवादा पहनाया गया है तथा दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन अधिकारिता का प्रयोग किसी न्यायालय के कार्यवाही के दुरूपयोग को रोकने क लिए किया जाना चाहिए।

5. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने आगे 2007(13) एससीसी 107 में संप्रकाशित बी0 **सुरेश यादव बनाम शरीफा बी एवं एक अन्य के मामले में भारत के मा0 उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया है, जिसका पैरा 12 तथा 13 निम्नवत् पठित हैः-**

''12 विक्रय-विलेख का निष्पादन करते समय, इसमें अपीलार्थी ने कोई मिथ्या या भ्रामक व्यपदेशन नही किया था। किसी कार्य को करने या न करने के लिए इसकी ओर से उत्प्रेरणा का कोई बेइमानीपूर्ण कार्य नही था जिसे वह नही कर सकता था या नही किया था यदि इसे इस प्रकार प्रवंचित न किया गया होता। सर्वसम्मति से मामला सक्षम सिविल न्यायालय के समक्ष लंबित है। सक्षम विधि न्यायालय का निर्णाय का निर्णय इस निमित्त स्वीकार किया जाना आवश्यक है। तत्वतः पक्षकारों के बीच विवाद एक सिविल विवाद है।

13. छल करने के अपराध को साबित करने के प्रयोजन हेतु परिवादी द्वारा यह प्रदर्शित किया जाना आवश्यक है कि वचन या व्यपदेशन करने के समय पर अभियुक्त का कपटपूर्ण या बेइमानीपूर्ण आशय था। इस प्रकृति के मामले में लंबित सिविल मुकदमें में पक्षकार द्वारा लिये गये आधार पर विचार करना विधि में अनुज्ञेय है। फिर भी, हमारा मतलब यह विधि अधिकथित करना नहीं है कि एक ही समय पर व्यक्ति का दायित्व सिविल का आपराधिक दोनों नही हो सकता है। लेकिन जब परिवाद याचिका के आधार लिया गया है जो सिविल वाद में इसके द्वारा लिये गये आधार के विरूद्ध या असंगत है, यह महत्वपूर्ण माना जाता है। यदि तथ्य जैसा हमारे समक्ष प्रदर्शित किया गया तात्पर्यित है कि इसमें अपीलार्थी ने उक्त दो कमरों को ध्वस्त कराया था तथा विक्रय विलेख के निष्पादन के समय पर उक्त तथ्य को छिपाया था, मामला भिन्न हो सकता था। चूँकि विक्रय विलेख 30-09-2005 को निष्पादित किया गया था तथा तात्पर्यित विध्वंसीकरण 29-09-2005 को हुआ था, यह अपेक्षित था कि परिवादी/प्रथम उत्तरदाता पूर्वोक्त वाद में स्वयं द्वारा दाखिल लिखित कथन में अपने वास्तविक शिकायत के साथ प्रकट होगी। इसने स्वयं को ज्ञात सर्वोत्तम कारणों से ऐसा करना नही चाहा था।''

आगे निवेदन किया है कि जब परिवाद याचिका में आधार लिया गया है जो सिविल वाद में परिवादी द्वारा लिये गये आधार के विरूद्ध या असंगत है, यह महत्वपूर्ण माना जाता है लेकिन याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह साफ-साफ निवेदन किया गया है कि निर्णय मामले में काफी अधिक सुसंगत नही है जैसा इस मामले में है, सिविल वाद तथा परिवाद में उल्लिखित परिवादी के मामले के बीच असंगति नही है।

6. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने आगे **2019(2) एससीसी 401 में संप्रकाशित विनोद नतेसन बनाम केरल राज्य तथा अन्य** के मामले में भारत के मा0 उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया है जिसमें इस मामले के तथ्यों में भारत के मा0 उच्चतम न्यायालय की राय है कि कोई अपराध नही बनता है क्योंकि भा0द0सं0 की धारा 406,

तथा 420 का संघटक इस मामलों के तथ्यों में नही बनता है तथा उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश की अभिपुष्ट किया था।

7. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने आगे 2023 एससीसी आन लाइन एस0सी0 90 में संप्रकाशित **उषा चक्रवर्ती तथा एक अन्य बनाम पश्चिम बंगाल राज्य तथा एक अन्य के मामले में भारत के माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया है, जिसका पैरा 15 तथा 16 निम्नवत् पठित हैः-**

"15. इस कार्यवाही में पेश सिविल वाद में संस्थित उक्त अभिवचनों के संबंध में अभिलेख पर सामग्रियों से प्रकट होता है कि उत्तरदाता को वास्तव में न्यास के सदस्यता से निकाला नही गया था। इस कार्यवाही में दाखिल प्रतिशपथ पत्र में, उत्तरदाता ने वस्तुतः सचिव के पद तथा न्यासिता से अपने हटाये जाने तथा इसके लंबित रहने के विरूद्ध दाखिल वाद के लंबित रहने को स्वीकार किया हैं। उक्त सिविल वाद में अर्न्तवर्ता आवेदनों में प्रतिकूल आदेशों को पारित करने का तथ्य तथा सिविल न्यायालय द्वारा पहुँचा गया'' प्रथम दृष्टया निष्कर्ष कि उत्तरदाता को सचिव के पद से तथा न्यासिता से हटाया जाता है, भी इसमें विवादित नही है। तब प्रश्न यह है कि क्यों उत्तरदाता इन सुसंगत पहलुओं को छिपायेगा? निर्विवाद्य का निर्विवादित तथ्य (उत्तरदाता द्वारा शपथपत्र में स्वीकृत) से स्कूल के सचिव के पद से तथा न्यासिता से उत्तरदाता के हटाये जाने पर सिविल वाद का होना प्रकट होगा। स्पष्ट रूप से यह मात्र स्वीकार किया जा सकता है कि चूँकि सचिव के पद तथा न्यासिता से हटाया जाना कारण वाचक घटना थी, इसने विवाद के सिविल प्रकृति को ढ़कने के लिए सिविल वाद के लंबित रहने को छिपाया था।

16. प्रकट न किये जाने से, उत्तरदाता ने वास्तव में सक्षम सिविल न्यायालय के समक्ष स्वयं तथा इसमें अपीलकर्तागण के बीच सिविलवाद लंबित होने को छिपाया था जो स्पष्टतया अपीलकर्तागण के विरूद्ध पूर्वोक्त अपराधो के करने के उत्तरदाता के अभिकथन हेतु कारणवाचक घटना है। हम इस पर आगे तथा थोडा बाद में इसके प्रभाव पर विचार करेंगे। इस स्थिति के संबंध मे कोई संदेह नही हो सकता है कि प्र0सू0रि0 का पंजीकरण करवाने के लिए तथा इस पर आधारित पारिणामिक अन्वेषण हेतु धारा 156(3) दण्डप्रक्रिया संहिता के अधीन दाखिल याचिका से अभिकथित अपराधो को आकृष्ट करने के लिए आवश्यक संघटको को पूरा किया जाना चाहिए। दूसरे शब्दो में यदि याचिका में इस प्रकार का अभिकथन अस्पष्ट है तथा अभिकथित अपराधों के संबंध मे विनिर्दिष्ट नही है इस कारण अभिकथित अपराधों को करने के अभियोग पर प्र0सू0रि0 के पंजीकरण तथा अन्वेषण का आदेश नही किया जा सकता है। जैसा एतस्मिन्पूर्व उल्लिखित है, उत्तरदाता ने अपीलकर्तागण के विरूद्ध धारा 323, 384, 476, 423, 467, 468, 420 तथा 120ख के अधीन अपराधों का किया जाना अभिकथित किया है। उक्त अभिकथन तथा इन्हें आकृष्ट करने के लिए संघटकों का परिशीलन मात्र, जैसा एतस्मिन्पूर्व उल्लिखित है, प्रकट होता है कि अभिकथन अस्पष्ट है तथा इसमें अभिकथित अपराधों का गठन करने के लिए आवश्यक संघटक नही था। परिवाद में पूर्णतया कोई अभिकथन नहीं है कि इसमें अपीलकर्तागण ने उत्तरदाता पर

उपहति कारित किया था, इन लोगों ने यह मामला प्रकट नहीं किया था कि अपीलकर्तागण ने साशय स्वयं या एक दूसरे को क्षति के भय में डाला था या इसे इस प्रकार के भय या क्षति में डालते हुए, इसे बेईमानीपूर्वक किसी सम्पति या बहुमूल्य प्रतिभूति को परिदत्त करने के लिए उत्प्रेरित किया था। यही स्थिति धारा 406, 423, 467, 468, 420 तथा 120ख के अधीन दण्डनीय अभिकथित अपराधों के संबंध में है। एतस्मिन्पूर्व निर्दिष्ट अभिकथित अपराध को आकृष्ट करने के लिए संघटक तथा उत्तरदाता द्वारा दाखिल आवेदन में अन्तर्विष्ट अभिथनों के प्रकृति से निःसंदेह यह स्पष्ट होता है कि उत्तरदाता पूर्वोक्त अपराधों के संबंध में इसमें अपीलकर्तागण के विरूद्ध विनिर्दिष्ट अभिकथन को करने में असफल था। इस प्रकार तथ्यात्मक स्थिति से प्रकट होता है कि आपराधिक कार्यवाहियों की उत्पत्ति तथा उद्देश्य और कुछ नहीं बल्कि पूर्वोक्त घटना तथा आगे कि अर्न्तवलित विवाद तत्वतः सिविल प्रकृति का है। अपीलकर्तागण तथा उत्तरदातागण ने विवाधक दाण्डिक अपराध का लवादा पहनाया है। इस प्रकार की परिस्थिति में जब उत्तरदाता ने पहले ही उपलब्ध सिविल उपचार का आश्रय लिया था तथा यह लंबित है, परमजीत बत्रा (ऊपर) में निर्णय का अनुसरण करते हुए, उच्च न्यायालय न्यायालय के कार्यवाही के दुरूपयोग को रोकने के लिए आपराधिक कार्यवाहियों को अभिखंडित किया होता लेकिन छिपाने के लिए।

आगे निवेदन किया है कि जब परिवादी विवाद के सिविल प्रकृति को ढ़कने के लिए सिविल वाद के लंबित रहने को छिपाता है, यह परिस्थिति है, जो परिवादी के विरूद्ध जायेगा।

8. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने आगे (2013) 11 एससीसी 673 में संप्रकाशित **परमजीत बत्रा बनाम उत्तराखण्ड राज्य तथा अन्य के मामले में भारत के मा0 उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया है, जिसका पैरा 12 निम्नवत् पठित हैः-**

> ‘‘12. संहिता की धारा 482 के अधीन अपने अधिकारिता का प्रयोग करते समय उच्च न्यायालय को सावधाना रहना चाहिए। इस शक्ति का प्रयोग कम तथा केवल किसी न्यायालय के कार्यवाही के दुरूपयोग को रोकने या अन्यथा न्याय का उद्देश्य प्राप्त करने के प्रयोजन हेतु किया जाना चाहिए। क्या परिवाद से दाण्डिक अपराध प्रकट होता है या नहीं इसमें अभिकथित तथ्यों के प्रकृति पर निर्भर करता है। क्या दाण्डिक अपराध का आवश्यक संघटक मौजूद है या नहीं, न्यायालय द्वारा फैसला किया जाना चाहिए। सिविल संव्यवहारों को प्रकट करने वालों परिवाद में आपराधिक प्रकृति हो सकता है। लेकिन उच्च न्यायालय को यह देखना चाहिए कि क्या विवाद जो तत्वतः सिविल प्रकृति का है, को दाण्डिक अपराध का लवादा पहनाया गया है। इस प्रकार की स्थिति में, यदि सिविल उपचार उपलब्ध है तथा वास्तव में अपनाया गया है जैसा इस मामले में हुआ है, उच्च न्यायालय को न्यायालय के कार्यवाही के दुरूपयोग को रोकने के लिए आपराधिक कार्यवाहियों का अभिखण्डन करने से हिचकिचाना नही चाहिए।

आगे निवेदन किया है कि चूँकि सिविल उपचार उपलब्ध है तथा वास्तव में अपनाया गया है, जैसा इस मामले में भी हुआ है, इस न्यायालय को विधि के कार्यवाही के दुरूपयोग को रोकने के लिए आपराधिक कार्यवाही का अभिखण्डन करने से हिचकिचाना नही चाहिए।

9. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने अंत में (2019) 16 एससीसी 739 पैरा 29 में संप्रकाशित प्रो0 आर0के0 विजयसारथी तथा एक अन्य बनाम सुधा सीताराम एवं एक अन्य के मामले में भारत के उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया है जिसका पैरा 29 निम्नवत् पठित हैः-

> ''29. वर्तमान मामले में, अपीलकर्तागण के पुत्र ने प्रथम उत्तरदाता के विरूद्ध धन के वसूली हेतु सिविल वाद संस्थित किया है। वाद लंबित है। प्रथम उत्तरदाता ने अभिकथित संव्यवहार के तिथि के छह वर्ष बाद तथा वाद दाखिल करने से लगभग तीन वर्ष बाद अपीलकर्तागण के विरूद्ध परिवाद दाखिल किया है। परिवाद में प्रकथनों को प्रथमदृष्टया पढ़ने से दण्ड संहिता के अन्तर्गत अपराधों को गठित करने के लिए आवश्यक संघटक प्रकट नही होता है। दाण्डिक अपराध गठित करने के लिए आवश्यक संघटकों के अभाव के बावजूद प्रथम उत्तरदाता द्वारा सिविल विवाद को अपराधिक प्रकृति का लवादा पहनाने का प्रयास किया गया है। अपीलकर्तागण के विरूद्ध प्रथम उत्तरदाता द्वारा दाखिल परिवाद न्यायालय के कार्यवाही का दुरूपयोग करता है तथा अभिखंडित किये जाने योग्य है।

आगे निवेदन किया गया है कि जैसा इस मामले में है, परिवाद के प्रकथनों से भा0द0सं0 के दण्ड प्रावधानों के अन्तर्गत अपराध गठित करने लिए आवश्यक संघटक प्रकट नही हुआ था अतः भारत के मा0 उच्चतम न्यायालय ने संप्रेक्षित किया कि परिवाद न्यायालय के कार्यवाही के दुरूपयोग का गठन करता है तथा इस प्रकार अभिखंडित किये जाने योग्य है, अतः यह निवेदन किया गया है कि सम्पूर्ण आपराधिक कार्यवाही तथा विद्वान जेएमएफसी राँची द्वारा पारित संज्ञान लेने वाले आदेश दिनांक 04.03.2020 को अभिखंडित तथा अपास्त किया जाय।

10. राज्य के लिए उपस्थित होते हुए विद्वान विशेष अभियोजक तथा उत्तरदाता सं0 2 के विद्वान अधिवक्ता ने सम्पूर्ण आपराधिक कार्यवाही तथा विद्वान जेएमएफसी राँची द्वारा पारित संज्ञान लेने वाले आदेश दिनांक 04.03.2020 के अभिखंडन के अनुरोध का विरोध किया है। (2020) 14 एससीसी 552 पैरा 8 में संप्रकाशित के **जगदीश बनाम उदय कुमार जी0एस0 तथा एक अन्य के मामले में भारत के मा0 उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया है जिसका पैरा 8 निम्नवत् पठित है:**

> ''8. इस प्रकार यह सुस्थापित है कि कतिपय मामलों में बिल्कुल एक ही तथ्यों से सिविल तथा आपराधिक कार्यवाहियों में उपचार उद्भूत हो सकता है तथा भले ही सिविल उपचार का लाभ पक्षकार द्वारा उठाया जाता है, इसे आपराधिक विधि में कार्यवाहियों को गतिमान करने से प्रवारित नही किया जाता है।''

आगे निवेदन किया गया है कि यदि सिविल उपचार का लाभ पक्षकार द्वारा उठाया जाता है इसे आपराधिक विधि में कार्यवाही को गतिमान करने से प्रवारित नहीं किया जाता है।

2006(6) एससीसी 736 (ऊपर) में संप्रकाशित इण्डियन ऑयल कार्पोरेशन बनाम एनईपीसी इण्डिया लि0 तथा अन्य के मामले में भारत के मा0 उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर भरोसा करते हुए विद्वान विशेष लोक अभियोजक ने निवेदन किया है कि दिये गये तथ्यों से समझा जा सकता है। (क) विशुद्ध रूप से सिविल दोष या (ख) विशुद्ध रूप से दाण्डिक अपराध या (ग) सिविल दोष तथा दाण्डिक अपराध तथा क्योंकि इस मामले में याचिकाकर्ता ने परिवादी को छल द्वारा विक्रय विलेख के पंजीकरण हेतु उपस्थित होने तथा हस्ताक्षर करने के लिए उत्प्रेरित तथा छल किया है, इसलिए, यह ऐसा मामला है जहाँ सिविल दोष तथा दाण्डिक अपराध दोनों बनता है। (1985) 2 एससीसी 370 में संप्रकाशित प्रतिभा रानी बनाम सूरज कुमार एवं एक अन्य के मामले में भारत के मा0 उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया गया है जिसका पैरा 21 निम्नवत् पठित है:

> ''21. फिर भी, कैसे कोई समझदार व्यक्ति ठीक ठाक आदेश पर पति के प्रति अविश्वास की भावना को प्रदर्शित करते हुए अपने स्वयं के ताला तथा कुंजी से अपने व्यक्तिगत सम्पत्ति या आभूषण, वस्त्र इत्यादि जैसे सामानों को एक ही घर में एक ही छत के नीचे रहने वाली नई विवाहिता स्त्री से अपेक्षा कर सकता है। हमें आश्चर्य है कि कैसे उच्च न्यायालय पति को अपने पत्नी के पूर्ण तथा व्यक्तिगत सम्पत्ति पर अपनी लालची निगाहें डालने की अनुमति दे सकता है मात्र इसलिए क्योंकि इसे इसके अभिरक्षा में रखा गया है, इसके द्वारा अभिरक्षा को विधिक तमाशा में बदला जाता है। दूसरी तरफ, हमें ऐसा प्रतीत होता है कि भले ही पत्नी की व्यक्तिगत स्वतंत्रता को संयुक्त रूप से रखा जाता है, यह अभिव्यक्त रूप से या विवक्षित रूप से पति के अभिरक्षा में रखा माना जायेगा तथा यदि वह बेईमानीपूर्वक दुर्विनियोग करता है या इसे वापस करने से इंकार करता है, वह निश्चित रूप से आपराधिक न्यास भंग का दोषी होता है तथा इस विधिक परिणाम से बचा नही जा सकता है। धारा 406 के अप्रयोज्यता के संबंध में अन्य स्थानों पर उच्च न्यायालय का संप्रेक्षण हमारी सहायता नही करता है तथा वास्तव में आपराधिक विधि के विचारधारा एवं भावना के अनुरूप नहीं है। बड़ी संख्या में ऐसे मामले हैं जहाँ आपराधिक विधि तथा सिविल विधि साथ-साथ चल सकते हैं। दोनों उपचार परस्पर अनन्य नहीं है बल्कि स्पष्ट रूप से समकालीन है एवं तत्वतः अपने अर्न्तवस्तु तथा परिणाम में भिन्न है। आपराधिक विधि का उद्देश्य उस अपराधी को दण्डित करना है जो व्यक्ति, सम्पत्ति या राज्य के विरूद्ध अपराध करता है जिसके लिए अभियुक्त को अपराध के सबूत पर इसके स्वतंत्रता से वंचित किया जाता है तथा कुछ मामले में इसके प्राण से भी। यह फिर भी, आगजनी, दुर्घटना इत्यादि जैसे मामलों में अपराधी पर वाद लाने हेतु पूर्णतया सिविल उपचारों को प्रभावित नहीं करता है। यह मानना अभिशाप है कि जब सिविल उपचार उपलब्ध होता है, आपराधिक अभियोजन पूर्णतया वर्जित होता है। दोनों प्रकार की कार्यवाही अर्न्तवस्तु, व्याप्ति तथा आशय में पूर्णतया भिन्न है। यह आधार लेना हमारे लिए पूर्णतया बोधगम्य नहीं है कि यदि पति बेईमानीपूर्वक अपने पत्नी के स्त्रीधन सम्पत्ति का दुर्विनियोग करता है, यद्यपि इसके अभिरक्षा

में रखा जाता है, यह धारा 406 भा0द0सं0 के अभियोजन का वर्जन करेगा या धारा 405 भा0दं0सं0 के संघटकों को नगण्य या निष्फल बनायेगा। यह कहना कि चूँकि विवाहिता स्त्री का स्त्रीधन इसके पति के अभिरक्षा में रखा गया है, इसके विरूद्ध कोई कार्यवाही नहीं की जा सकती है क्योंकि कोई अपराध नहीं किया गया है विधि के वास्तविक आशय को अभिभावी तथा विकृत करना होता है।

जो तीन जजों के पीठ का निर्णय है, विद्वान विशेष लोक अभियोजन द्वारा यह निवेदन किया गया है कि यह विधि तथा सुस्थापित सिद्धांत है कि चूँकि ऐसे काफी मामले हैं जहाँ आपराधिक विधि का सिविल विधि साथ साथ चल सकता है, दोनों उपचार परस्पर अनन्य नहीं है बल्कि स्पष्ट रूप से सहविस्तारी हैं तथा अपने अर्न्तवस्तु तथा परिणाम के तत्वतः भिन्न है। आपराधिक विधि का उद्देश्य उस अपराधी को दण्डित करना होता है जो व्यक्ति, राज्य के सम्पत्ति के विरूद्ध अपराध करता है जिसके लिए अभियुक्त को अपराध के सबूत पर, इसके स्वतंत्रता से वंचित किया जाता है तथा कुछ मामलों में इसके प्राण से भी तथा यह मानना अभिशाप है कि जब सिविल उपचार उपलब्ध होता है, आपराधिक अभियोजन पूर्णतया वर्जित होता है। उत्तरदाता सं0 2 के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आगे निवेदन किया गया है कि सिविल वाद का दाखिल किया जाना मात्र परिवादी को परिवाद में आगे कार्यवाही से विवर्जित नही करेगा जब भा0द0सं0 की धारा 420 के अधीन दण्डनीय अपराध बनता है तथा याचिकाकर्ता के विरूद्ध अन्य अपराध भी बनता है। उत्तरदाता सं0 2 के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आगे निवेदन किया गया है कि आधार जिस पर, संज्ञान आदेश का अभिखण्डन ईत्सित है, मूलतः याचिकाकर्ता की प्रतिरक्षा हैं जिस पर विचार विचारण न्यायालय द्वारा विचारण के समुचित प्रक्रम पर किया जा सकता है तथा निश्चित रूप से, दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन इस न्यायालय के अधिकारिता का प्रयोग लघु विचारण करने हेतु नहीं किया जा सकता है तथा इस निष्कर्ष पर नहीं आया जा सकता है कि याचिकाकर्ता अभिकथन का दोषी नहीं है, अतः यह निवेदन किया गया है कि इस आपराधिक विविध याचिका को सभी गुणावगुण के बिना होने के नाते खारिज किया जाय।

11. न्यायालय में किये गये प्रतिद्वन्दी निवेदनों को सुनने के बाद तथा अभिलेख में उपलब्ध सामग्रियों का सावधानीपूर्वक परिशीलन करने के पश्चात, यहाँ यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि के0 जगदीश बनाम उदय कुमार जी, एस तथा एक अन्य (ऊपर) के मामले में भारत के उच्चतम न्यायालय द्वारा दोहराये गये विधि के सिद्धांत के दृष्टिगत, इस न्यायालय को यह धारित करने में कोई हिचकिचाहट नही है कि यदि सिविल उपचार पक्षकार को प्राप्त हैं, इसे आपराधिक विधि में कार्यवाही को गतिमान करने से प्रवारित नही किया जाता है।

12. अब मामले के तथ्यों पर आते हैं, याचिकाकर्ता ने अभिकथित रूप से कपटपूर्वक परिवादी के साथ छल द्वारा विक्रय विलेख प्राप्त किया था, इसलिए, इस न्यायालय को यह धारित करने में कोई हिचकिचाहट नही है कि यह ऐसा मामला है जहाँ आपराधिक विधि तथा सिविल विधि साथ-साथ चलता है तथा निश्चित रूप से, इस मामले का उपचार तथा सिविल वाद में ईप्सित विक्रय विलेख के रद्दकरण का उपचार अपने परिणाम में भिन्न है एवं याचिका में किया गया अभिकथन प्रथम दृष्टया, भा0द0सं0 की धारा 406 एवं विधि के अन्य दण्ड प्रावधानों के अन्तर्गत दण्डनीय अपराध बनता है।

13. इन परिस्थितियों में, इस न्यायालय की सुविचारित राय है कि यह उपयुक्त मामला नहीं है, जहाँ सम्पूर्ण आपराधिक कार्यवाही एवं विद्वान जेएमएफसी, राँची द्वारा पारित संज्ञान लेने वाले आदेश दिनांक 04.03.2020 को अभिखंडित एवं अपास्त किया जाय।

14. तद्नुसार, इस आपराधिक विविध याचिका को सभी गुणावगुण के बिना होने के नाते खारिज किया जाता है तथा पहले अनुदत्त अंतरिम आदेश को निष्प्रभावी किया जाता है।

(अनिल कुमार चौधरी, न्यायमूर्ति)

झारखण्ड उच्च न्यायालय, राँची
दिनांक 6 दिसम्बर, 2023
स्मिता/एएफआर

यह अनुवाद (शिवाकान्त तिवारी) पैनल अनुवादक के द्वारा किया गया।